

श्रीमद्भागवतम् स्कन्ध 1 अध्याय 5: नारद का व्यास को उपदेश

11 September 2026



पाठ से पहले एक निवेदन

श्रीमद्भागवत महापुराण के ये अध्यायवार सार गीता प्रेस भागवत को मुख्य आधार मानकर तैयार किए गए हैं। ये भागवत के अध्ययन में सहायक हैं, मूल ग्रंथ का स्थान नहीं ले सकते।

अध्ययन का मुख्य और अनुशंसित मार्ग गीता प्रेस की भागवत पुस्तक से सीधा पाठ है। यात्रा में, घर से दूर, या जब पुस्तक पास न हो, तब निरंतर अध्ययन, पुनरावृत्ति और समझ के लिए इन सारों का सहारा लिया जा सकता है।



सरस्वती के पावन तट पर देवर्षि नारद, वीणा हाथ में लिए, मन्द-मन्द मुस्कुराते हुए, खिन्नमना वेदव्यास को वह एक बात समझाते हैं जो उनके महान ग्रन्थ में अब भी शेष थी।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

श्रीमद्भागवतम् विज्ञडम् में आपका स्वागत है — श्रीमद्भागवत महापुराण की पवित्र कथाओं और शिक्षाओं की एक भक्तिमयी यात्रा। पिछले अध्याय में हमने महर्षि वेदव्यास को सरस्वती के तट पर शोकाकुल छोड़ा था — वेद और महाभारत जगत् को देकर भी उन्हें लगता था कि उनके जीवन-श्रम में कुछ अधूरा रह गया है। अब उनके दिव्य अतिथि बोलते हैं। इस पञ्चम अध्याय में देवर्षि नारद उस अधूरेपन पर अँगुली रख देते हैं,

व्यास जी को उस ग्रन्थ की ओर संकेत करते हैं जिसकी रचना के लिए वे जन्मे थे, और सबसे अधिक कोमलता से अपने ही पूर्वजन्म की कथा सुनाते हैं — जब केवल श्रीकृष्ण की महिमा सुनने मात्र से एक दासीपुत्र का हृदय सदा के लिए भगवान् को समर्पित हो गया था।

अध्याय-परिचय

- शास्त्र: श्रीमद्भागवत महापुराण
- स्कन्ध: 1 (प्रथम स्कन्ध)
- अध्याय: 5 (पञ्चम अध्याय)
- अध्याय-शीर्षक: नारद द्वारा वेदव्यास को श्रीमद्भागवत का उपदेश
- प्रमुख वक्ता: देवर्षि नारद
- प्रमुख श्रोता: महर्षि वेदव्यास, कृष्णद्वैपायन, पराशरनन्दन
- मुख्य स्थल: सरस्वती नदी के तट पर व्यास जी का आश्रम; बाह्य कथा-सन्दर्भ — नैमिषारण्य में सूत जी द्वारा ऋषियों को कही जा रही कथा
- केन्द्रीय विषय: भगवद्भक्ति ज्ञान और कर्म से क्यों श्रेष्ठ है, तथा नारद जी का यह वृत्तान्त कि श्रीकृष्ण की महिमा सुनने ने उन्हें कैसे बदल दिया
- प्रमुख श्लोक-परास: स्कन्ध 1, अध्याय 5, श्लोक 1–40
- मूल संस्करण: गीता प्रेस श्रीमद्भागवत महापुराण

पूर्व-प्रसंग

चतुर्थ अध्याय के अन्त में महर्षि वेदव्यास सरस्वती के पवित्र तट पर व्याकुल बैठे थे। उन्होंने व्रतों का पालन किया, वेदों का अध्ययन और सम्पादन किया, और महाभारत के द्वारा उनका मर्म प्रकट किया जिससे समस्त जन अपना मार्ग पा सकें। फिर भी उनका हृदय विचित्र रूप से रिक्त-सा था, मानो उनकी आत्मा ने अब तक अपना स्वरूप न जाना हो। जब वे इसी चिन्ता में डूबे थे कि अब भी क्या शेष है, तभी देवर्षि नारद उनके आश्रम में पधारे, और व्यास जी ने तुरन्त उठकर उनका स्वागत और पूजन किया। यहीं से, दोनों ऋषियों के साथ बैठने से, हमारा अध्याय आरम्भ होता है।

नारद जी का स्नेहमय प्रश्न

जब नारद जी सुखपूर्वक, वीणा हाथ में लिए बैठ गए, तब वे विख्यात देवर्षि अपने पास बैठे वेदव्यास की ओर मुड़े और बोले — कुछ-कुछ मुस्कुराते हुए, मानो अपने मित्र के व्यर्थ शोक पर।

हे परम भाग्यशाली पराशरनन्दन, उन्होंने पूछा, क्या आपका शरीर सन्तुष्ट है, और क्या आपका मन शान्त है? निश्चय ही जो कुछ आप जानना चाहते थे वह सब आपने पा लिया है, क्योंकि आपने वह अद्भुत महाभारत रचा है जो मनुष्य के समस्त पुरुषार्थों का प्रतिपादन करता है। आपने सनातन ब्रह्म का भी अनुसन्धान और साक्षात्कार किया है — फिर भी, हे स्वामी, आप ऐसे शोक करते हैं मानो अपने जीवन के लक्ष्य तक अब तक न पहुँचे हों।

व्यास जी ने सरल निष्कपटता से उत्तर दिया। आपने मेरे विषय में जो कुछ कहा वह सत्य है, उन्होंने कहा, फिर भी मेरी आत्मा को सन्तोष नहीं मिलता। मैं आपसे इसका कारण पूछता हूँ, क्योंकि आप स्वयम्भू ब्रह्मा के पुत्र हैं, और आपकी अन्तर्दृष्टि अगाध है। आप सूर्य के समान समस्त लोकों में विचरते हैं; प्राणवायु के समान समस्त प्राणियों के भीतर संचरण करते हैं, और सबके हृदय पढ़ लेते हैं। यद्यपि मैंने व्रत और योग के द्वारा परम ब्रह्म और वेदरूप ब्रह्म — दोनों का साक्षात्कार किया है, फिर भी कृपया मुझे मेरी वह महती कमी बता दीजिए।

जो एक बात शेष थी

नारद जी ने सत्य को कोमल नहीं बनाया। आपने भगवान् की निर्मल महिमा का उस प्रकार गान नहीं किया जैसा करना चाहिए था, उन्होंने कहा। उस ज्ञान को अधूरा समझिए जो भगवान् को प्रसन्न न करे। आपने धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष — मनुष्य के पुरुषार्थों का — विस्तार से वर्णन किया, किन्तु भगवान् वासुदेव की महिमा का उतना पूर्ण वर्णन नहीं किया।

श्रीनारद उवाच

भवतानुदितप्रायं यशो भगवतोऽमलम् ।

येनैवासौ न तुष्येत मन्ये तद्दर्शनं खिलम् ॥ ८ ॥

śrī-nārada uvāca bhavatānūdita-prāyaṁ yaśo bhagavato 'malam yenaivāsau na tuṣyeta manye tad darśanaṁ khilam

अर्थ: आपने प्रायः भगवान् के निर्मल यश का गान नहीं किया। जो ज्ञान उन्हें सन्तुष्ट न करे, उसे मैं अधूरा मानता हूँ। (स्कन्ध 1, अध्याय 5, श्लोक 8)

जो वाणी श्रीहरि की स्तुति कभी नहीं करती, नारद जी ने आगे कहा — चाहे वह कितनी ही अलंकृत क्यों न हो — वह उस सरोवर के समान है जहाँ कौवे जूठन पर रीझते हैं; भगवान् के चरणकमलों में बसने वाले हंस-सदृश भक्त उसमें रस नहीं लेते। किन्तु वह रचना जिसका प्रत्येक श्लोक अनन्त भगवान् के नामों को धारण करता है, उनकी महिमा की छाप लिए हुए है, जगत् के पापों का नाश कर देती है; ऐसी ही वाणी को सन्तजन सुनना, गाना और दोहराना प्रेम करते हैं।

तद्वाग्विसर्गो जनताघविप्लवो

यस्मिन् प्रतिश्लोकमबद्धवत्यपि ।

नामान्यनन्तस्य यशोऽङ्कितानि यत्

शृण्वन्ति गायन्ति गृणन्ति साधवः ॥ ११ ॥

tad-vāg-visargo janatāgha-viplavo yasmin prati-ślokaṁ abaddhavyaty api nāmāny anantasya yaśo 'ṅkitāni yat śṛṇvanti gāyanti gṛṇanti sādhaḥ

अर्थ: वह रचना, भले ही शब्दरचना में त्रुटिपूर्ण हो, जिसके प्रत्येक श्लोक में अनन्त भगवान् के नाम और उनकी महिमा के चिह्न हों, जनसमूह के पापों का नाश करती है; सन्तजन उसे सुनते, गाते और दोहराते हैं। (स्कन्ध 1, अध्याय 5, श्लोक 11)



कमल-सरोवर में बसने वाले हंसों के समान, भगवान् के भक्त केवल उसी वाणी में रस लेते हैं जो उनके नाम और महिमा का गान करती है (श्लोक 10-11)।

भक्ति — ज्ञान और कर्म से ऊपर

अब नारद जी ने अपने उपदेश का मर्म खोला। निर्दोष ज्ञान भी, जो सीधे मोक्ष की ओर ले जाता है, यदि अच्युत भगवान् की भक्ति से रहित हो तो आत्मा को सचमुच सुशोभित नहीं करता। तब फिर वह सकाम कर्म — जो प्रत्येक अवस्था में दुःख में जड़ा है — अथवा वह निष्काम कर्म भी जो भगवान् को समर्पित न हुआ हो, कैसे महिमा बढ़ा सकता है? हे अमोघदृष्टि, सत्यनिष्ठ व्यास! अब एकाग्र मन से श्रीहरि की लीलाओं का स्मरण कीजिए, समस्त जगत् की मुक्ति के लिए।

उन्होंने उस चंचल मन की भी चेतावनी दी जो भगवान् की लीलाओं से विमुख हो जाता है: वायु के झोंके से आहत नौका के समान, वह कहीं विश्राम नहीं पाता, जगत् के अनन्त नाम-रूपों में भटकता रहता है। तब नारद जी ने वह वचन कहा जो युगों से जिज्ञासुओं को सान्त्वना देता आया है — कि बुद्धिमान् को उसी एक लक्ष्य के लिए यत्न करना चाहिए जो उच्चतम स्वर्ग से लेकर निम्नतम लोक तक भटकने से नहीं मिलता, जबकि इन्द्रिय-सुख तो दुःख के समान स्वयं ही, बिना माँगे, काल के गम्भीर एवं अलक्षित प्रवाह से प्राप्त हो जाते हैं।

तस्यैव हेतोः प्रयतेत कोविदो
न लभ्यते यद्भ्रमतामुपर्यधः ।
तल्लभ्यते दुःखवदन्यतः सुखं
कालेन सर्वत्र गभीररंहसा ॥ १८ ॥

tasyaiva hetoḥ prayateta kovido na labhyate yad bhramatām upary adhaḥ tal labhyate duḥkhavad anyataḥ sukhaṁ kālena sarvatra gabhīra-ramhasā

अर्थ: बुद्धिमान् को केवल उसी लक्ष्य के लिए यत्न करना चाहिए जो उच्चतम से निम्नतम लोकों तक भटकने से नहीं मिलता; क्योंकि सुख भी, दुःख के समान, समयानुसार सर्वत्र काल के गम्भीर एवं अनिवार्य प्रवाह से स्वयं ही प्राप्त हो जाता है। (स्कन्ध 1, अध्याय 5, श्लोक 18)

और इसीलिए, नारद जी ने आग्रह किया, जो मुक्तिदाता भगवान् की सेवा करता है वह इस जन्म-मृत्यु के चक्र में लौटकर नहीं आता, भले ही किसी संयोगवश वह क्षणभर विमुख हो जाए; भगवान् के चरणों का एक बार आलिंगन करने की मधुरता का स्मरण कर वह उन्हें त्यागने का विचार भी नहीं करता।

आप परम पुरुष के अंश हैं

तब नारद जी ने व्यास जी की दृष्टि को सबसे बड़े सत्य की ओर उठाया। यह सम्पूर्ण जगत् भगवान् से अन्य नहीं है, फिर भी वे इससे परे स्थित हैं, क्योंकि वे ही इसकी उत्पत्ति, स्थिति और लय के कारण हैं। यह आप स्वयं जानते हैं, नारद जी ने कहा; मैंने तो केवल संकेतमात्र से इसे आपको दिखाया है।



सम्पूर्ण जगत् परम भगवान् में स्थित है, जो फिर भी इसके स्रोत, आधार और अन्त रूप में इससे भिन्न हैं (श्लोक 20)।

इदं हि विश्वं भगवानिवेतरो
यतो जगत्स्थाननिरोधसम्भवाः ।
तद्धि स्वयं वेद भवांस्तथापि ते
प्रादेशमात्रं भवतः प्रदर्शितम् ॥ २० ॥

*idaṁ hi viśvaṁ bhagavān ivetaro yato jagat-sthāna-nirodha-sambhavāḥ tad dhi svayaṁ veda
bhavāṁs tathāpi te prādeśa-mātraṁ bhavataḥ pradarśitam*

अर्थ: यह जगत् वस्तुतः भगवान् ही है, फिर भी वे इससे भिन्न हैं, क्योंकि इसी से जगत् उत्पन्न होता है, इसी में स्थित रहता है और इसी में लीन होता है। यह आप स्वयं जानते हैं; फिर भी मैंने इसे यहाँ संक्षेप में दिखा दिया है। (स्कन्ध 1, अध्याय 5, श्लोक 20)

निश्चय जानिए, नारद जी ने कहा, कि आप परम पुरुष के अंश हैं; अजन्मा होते हुए भी आपने जगत् के कल्याण के लिए जन्म लिया है। इसलिए उस परम यशस्वी भगवान् की लीलाओं का विस्तार से वर्णन कीजिए। मनीषियों ने घोषित किया है कि तप, शास्त्र-ज्ञान, यज्ञ, वेदों के स्वराघात-सहित पाठ, ज्ञान और दान — इन सबका अन्तिम प्रयोजन उसी उत्तम यशवाले भगवान् के गुणों का गान ही है।

नारद जी अपने पूर्वजन्म की कथा सुनाते हैं

उपदेश देकर नारद जी ने अब व्यास जी को सबसे पक्का प्रमाण दिया — अपनी ही आत्मा की कथा। पूर्व कल्प में, अपने पिछले जन्म में, उन्होंने कहा, मैं वेदवेत्ता ब्राह्मणों की एक दासी का पुत्र होकर जन्मा था। बालक रहते ही मुझे कुछ यायावर तपस्वियों की सेवा में नियुक्त किया गया जो वर्षाकाल में एक स्थान पर ठहरना चाहते थे।



पूर्वजन्म में, वह बालक जो आगे चलकर नारद बना, वर्षाकाल भर यायावर ऋषियों की सेवा करता है और श्रीकृष्ण की कथाएँ सुनता है (श्लोक 23-26)।

अहं पुरातीतभवेऽभवं मुने
दास्यास्तु कस्याश्चन वेदवादिनाम् ।
निरूपितो बालक एव योगिनां
शुश्रूषणे प्रावृषि निर्विविक्षताम् ॥ २३ ॥

aham purātīta-bhave 'bhavam mune dāsyās tu kasyāścana veda-vādinām nirūpito bālaka eva yoginām śuśrūṣaṇe prāvṛṣi nirvivikṣatām

अर्थ: हे मुने! विगत कल्प के एक जन्म में मैं वेद-ज्ञानी ब्राह्मणों की एक दासी की सन्तान था; उस समय बालक होते हुए भी मुझे उन तपस्वी योगियों की परिचर्या में लगा दिया गया था, जो वर्षा के मौसम में एक ही स्थान पर रुके रहना चाहते थे। (स्कन्ध 1, अध्याय 5, श्लोक 23)

यद्यपि मैं मात्र एक बालक था, नारद जी ने कहा, तथापि मैं चंचल क्रीड़ाओं से रहित, शान्त और आज्ञाकारी, तथा मितभाषी था। यह देखकर वे ऋषि मुझ पर दयालु हुए, और उनकी अनुमति से मैं दिन में एक बार केवल उनके पात्रों में बचा हुआ अन्न खाता, और इससे समस्त पापों से शुद्ध हो गया। इस प्रकार उनकी सेवा करते हुए मेरा मन निर्मल हो गया और उनके धर्म — भक्ति के धर्म — से प्रेम करने लगा। और वहीं, भगवान् की महिमा का अनवरत गान करने वाले उन सन्तों की कृपा से, प्रतिदिन मैं श्रीकृष्ण की मनोहर कथाएँ सुनता; और ज्यों-ज्यों मैं श्रद्धा से सुनता, पग-पग पर उस मनोहर यशवाले भगवान् के प्रति अनुराग मुझमें जागता गया।

तत्रान्वहं कृष्णकथाः प्रगायता-

मनुग्रहेणाशृणवं मनोहराः ।

ताः श्रद्धया मेऽनुपदं विशृण्वतः

प्रियश्रवस्यङ्ग ममाभवद्रुचिः ॥ २६ ॥

tatrānvaham kṛṣṇa-kathāḥ pragāyatām anugraheṇāśṛṇavaṁ manoharāḥ tāḥ śraddhayā me 'nupadam viśṛṇvataḥ priyaśravasy aṅga mamābhavad ruciḥ

अर्थ: वहाँ उनकी कृपा से मैं प्रतिदिन श्रीकृष्ण की मनोहर कथाएँ सुनता, जैसा वे ऋषि उन्हें गाते थे; और पग-पग पर श्रद्धा से सुनते हुए, हे प्रिय! उस मनोहर यशवाले भगवान् के प्रति मुझमें रुचि उत्पन्न हो गई। (स्कन्ध 1, अध्याय 5, श्लोक 26)

ऋषियों की विदाई-देन

वर्षा और उसके पश्चात् आने वाली शरद् ऋतु भर, नारद जी ने श्रीहरि की पवित्र स्तुतियाँ दिन में तीन बार सुनीं, और उनके हृदय में वह भक्ति अंकुरित हुई जो रज और तम को उखाड़ देती है। जब उन ऋषियों के प्रस्थान का समय आया, तब उस विनम्र, श्रद्धावान् बालक पर करुणा कर, जिसने उनकी इतनी सेवा की थी, उन्होंने उसे वह परम गोपनीय ज्ञान कृपापूर्वक प्रदान किया — वही ज्ञान जो स्वयं भगवान् ने प्रकट किया था। उसी के द्वारा नारद जी ने जगत् के रचयिता भगवान् वासुदेव की माया — उनकी मोहिनी शक्ति — की महिमा को जाना, वह ज्ञान जिससे जीव उनके परम धाम को प्राप्त होते हैं।

भगवान् को समर्पित कर्म

तब नारद जी ने समझाया कि सामान्य कर्म ही किस प्रकार घर लौटने का मार्ग बन सकते हैं। उन्होंने वैद्य का दृष्टान्त दिया: जो वस्तु रोग उत्पन्न करती है वही सामान्यतः उसे दूर नहीं कर सकती — फिर भी वही वस्तु, उचित रूप से औषधि बनाकर, रोग को अवश्य दूर कर देती है।

आमयो यश्च भूतानां जायते येन सुव्रत ।

तदेव ह्यामयं द्रव्यं न पुनाति चिकित्सितम् ॥ ३३ ॥

āmaya yaś ca bhūtānāṁ jāyate yena suvrata tad eva hy āmayam dravyam na punāti cikitsitam

अर्थ: हे सुव्रत! जिस वस्तु से प्राणियों में रोग उत्पन्न होता है, वही वस्तु अपने कच्चे रूप में उस रोग को दूर नहीं करती; किन्तु वही, औषधि-रूप में संस्कारित होने पर, उसे अवश्य दूर कर देती है। (स्कन्ध 1, अध्याय 5, श्लोक 33)

इसी प्रकार, मनुष्यों के समस्त कर्म सामान्यतः उन्हें पुनर्जन्म के चक्र में बाँधते हैं; किन्तु वही कर्म, जब भगवान् को समर्पित हो जाते हैं, तो बाँधने की शक्ति खो देते हैं। इस जगत् में भगवान् की प्रसन्नता के लिए किए गए कर्तव्य भक्ति-सहित ज्ञान प्रदान करते हैं। जो उनकी इच्छा के अधीन कर्म करते हैं, वे बार-बार श्रीकृष्ण के नामों और स्तुतियों का उच्चारण और ध्यान करते हैं। और नारद जी ने वे ही आराधना के शब्द कहे जिनसे ऐसा भक्त उनकी उपासना करता है।



भक्त उस पवित्र मन्त्र से भगवान् की उपासना करता है, वासुदेव, प्रद्युम्न, अनिरुद्ध और सङ्कर्षण को नमस्कार अर्पित करता हुआ (श्लोक 37)।

ॐ नमो भगवते तुभ्यं वासुदेवाय धीमहि ।

प्रद्युम्नायानिरुद्धाय नमः सङ्कर्षणाय च ॥ ३७ ॥

om namo bhagavate tubhyaṁ vāsudevāya dhīmahi pradyumnāyāniruddhāya namaḥ saṅkarṣaṇāya ca

अर्थ: हे भगवान् वासुदेव! आपको नमस्कार है; हम आपका ध्यान करते हैं। प्रद्युम्न, अनिरुद्ध और सङ्कर्षण को भी नमस्कार है। (स्कन्ध 1, अध्याय 5, श्लोक 37)

यज्ञपति भगवान्, नारद जी ने समझाया, का शरीर ही वह पवित्र मन्त्र है और वे किसी भौतिक रूप को धारण नहीं करते; केवल वही सम्यक् दृष्टिवाला है जो इन दिव्य रूपों के नामों से उनकी उपासना करता है।

भगवान् का वरदान और नारद जी का आग्रह

जब उस बालक ने श्रद्धापूर्वक यह उपासना सम्पन्न की, तब भगवान् केशव ने उसे आत्मज्ञान, ऐश्वर्य और अपने चरणों में प्रेममयी भक्ति कृपापूर्वक प्रदान की।



भगवान् केशव उस बालक को आत्मज्ञान, दिव्य ऐश्वर्य और अपने चरणों में प्रेममयी भक्ति कृपापूर्वक प्रदान करते हैं (श्लोक 39)।

इमं स्वनिगमं ब्रह्मन्नवेत्य मदनुष्ठितम् ।

अदान्मे ज्ञानमैश्वर्यं स्वस्मिन् भावं च केशवः ॥ ३९ ॥

imaṁ sva-nigamaṁ brahmann avetya mad-anuṣṭhitam adān me jñānam aiśvaryaṁ svasmin bhāvaṁ ca keśavaḥ

अर्थ: हे ब्राह्मण! यह देखकर कि मैंने उनके इस उपदेश का पालन किया, भगवान् केशव ने मुझे ज्ञान, दिव्य ऐश्वर्य और अपने प्रति प्रेममयी भक्ति प्रदान की। (स्कन्ध 1, अध्याय 5, श्लोक 39)

अपने रूपान्तरण का रहस्य खोलकर, नारद जी ने व्यास जी से अपना स्नेहमय अनुरोध किया: अब उस सर्वशक्तिमान् भगवान् की महिमाओं का वर्णन कीजिए, क्योंकि उन्हें सुनकर मनीषी भी अपनी खोज के अन्त तक पहुँच जाते हैं। सन्तजन उसी महिमा के गान को, और किसी को नहीं, उन जीवों के लिए एकमात्र सच्ची औषधि मानते हैं जो बार-बार जगत् के दुःखों से पीड़ित होते हैं।

प्रमुख श्लोक

अध्याय नारद जी के इस आग्रह पर समाप्त होता है — वही अनुरोध जो शीघ्र ही सम्पूर्ण भागवत को प्रकट करेगा:

त्वमप्यदभ्रश्रुत विश्रुतं विभोः

समाप्यते येन विदां बुभुत्सितम् ।

प्राख्याहि दुःखैर्मुहुर्दितात्मनां

सङ्क्लेशनिर्वाणमुशन्ति नान्यथा ॥ ४० ॥

tvam apy adabhra-śruta viśrutam vibhoḥ samāpyate yena vidāṁ bubhutsitam prākhyāhi duḥkhaḥair muhur arditātmanāṁ saṅkleśa-nirvāṇam uśanti nānyathā

अर्थ: हे विपुल ज्ञानवाले! उस सर्वशक्तिमान् भगवान् की विख्यात महिमाओं का वर्णन कीजिए, जिनसे मनीषी अपनी ज्ञान-जिज्ञासा को पूर्ण करते हैं; क्योंकि सन्तजन मानते हैं कि बार-बार दुःख से पीड़ित जीवों के क्लेश मिटाने का इसके अतिरिक्त और कोई उपाय नहीं। (स्कन्ध 1, अध्याय 5, श्लोक 40)

प्रमुख शिक्षाएँ

1. भक्ति-विहीन ज्ञान हृदय को अतृप्त छोड़ देता है। वेदों के स्वामी व्यास जी भी तब तक रिक्तता अनुभव करते रहे जब तक नारद जी ने उसका कारण न बताया — भगवान् की महिमा अब तक गाई नहीं गई थी (श्लोक 8)। ज्ञान को विश्राम केवल भगवत्प्रेम में मिलता है।
2. भगवान् के नाम अपूर्ण वाणी को भी पवित्र कर देते हैं। जो वाणी अनन्त भगवान् के नामों को धारण करती है वह जगत् को पवित्र करती है, चाहे उसकी शब्दरचना कितनी ही साधारण हो, जबकि भगवान् से रहित अत्यन्त परिष्कृत वाणी भी निष्फल है (श्लोक 11)। वाणी को पवित्र भक्ति बनाती है, वाक्पटुता नहीं।
3. भक्ति ज्ञान और कर्म — दोनों को पूर्ण करती है। निर्दोष ज्ञान भी आत्मा को सुशोभित नहीं करता यदि उसमें भगवद्भक्ति न हो, और भगवान् को समर्पित कर्म अपनी बन्धन-शक्ति खो देता है (श्लोक 12, 34)। भक्ति ही वह शेष तत्त्व है जो शेष सबको रूपान्तरित कर देती है।
4. उसी एक लक्ष्य के लिए यत्न करें जो लोक नहीं दे सकते। स्वर्ग के शिखर से लेकर पाताल की गहराई तक कहीं घूमने पर भी जीवन का सच्चा प्रयोजन हाथ नहीं आता, जबकि सुख और दुःख दोनों काल की अबाध गति के साथ स्वयं ही चले आते हैं — इसलिए बुद्धिमान् अपना समस्त प्रयास केवल भगवान् की ओर लगाता है (श्लोक 18)।
5. सत्संग और श्रवण भगवत्प्रेम जगाते हैं। एक दासीपुत्र केवल सन्तों की सेवा और श्रद्धा से श्रीकृष्ण की कथाएँ सुनकर महान् देवर्षि नारद बन गया (श्लोक 25-26)। यह मार्ग विनम्रतम हृदय की भी पहुँच में है।
6. प्रत्येक कर्तव्य भगवान् को समर्पित किया जा सकता है। जैसे हानिकारक वस्तु उचित रूप से संस्कारित होकर औषधि बन जाती है, वैसे ही सामान्य कर्म भगवान् को समर्पित होकर मुक्तिदायी बन जाता है (श्लोक 33-35)। भक्ति हमारे समस्त जीवन को औषधि-रूप में संस्कारित कर देती है।

एक भाक्तेपूर्ण चिन्तन

इस अध्याय में सबसे कोमल बात यह है कि महान् उपदेश अन्ततः कहाँ जाकर टिकता है। नारद जी व्यास जी को तर्कों से अभिभूत नहीं करते; वे उन्हें एक बचपन की कथा सुनाते हैं। इससे पूर्व कि वे वीणा लिए लोकों में विचरने वाले देवर्षि बनते, नारद एक निर्धन स्त्री के पुत्र थे, एक सेवक-बालक जो सन्तों का जूठन खाता और सन्ध्या-सन्ध्या उन्हें श्रीकृष्ण का गान करते सुनता था। उसके पास न विद्या थी, न पद, न किसी कर्मकाण्ड की पात्रता — केवल एक शान्त हृदय और सुनने की तत्परता। और वही पर्याप्त था। भगवान् की महिमा, एक बार कानों में प्रवेश कर, कभी नहीं छूटी। जब हम स्वयं को शास्त्रों से दूर, अपात्र, कृपा के लिए अत्यन्त साधारण अनुभव करें, तब यह अध्याय कोमलता से उत्तर देता है: उसी प्रकार आरम्भ करें जैसे उस बालक ने किया। भगवान् से प्रेम करने वालों का संग रखें, श्रद्धा से उनकी कथाएँ सुनें, और श्रवण को अपना धीमा, निश्चित कार्य करने दें। वही द्वार जो एक सेवक-बालक के लिए खुला, हमारे लिए भी खुला है।

एक दैनिक भक्ति-अभ्यास

आज वही करें जो बालक नारद ने किया: श्रद्धा से भगवान् की महिमा सुनें। बिना किसी हड़बड़ी के कुछ शान्त मिनट निकालकर श्रीकृष्ण की कथाएँ पढ़ें या सुनें, और अपने सामान्य कर्तव्य करते हुए उन्हें मन-ही-मन भगवान् को समर्पित करें — छोटे-से-छोटे कार्य को भी उपासना बना लें। यदि चाहें तो नारद जी के दिए पवित्र शब्दों को दोहराएँ: *ॐ नमो भगवते वासुदेवाय*। भक्ति को अपना मापदण्ड बनाएँ, पूर्णता को नहीं।

उपसंहार

इस प्रकार श्रीमद्भागवत का पञ्चम अध्याय — व्यास और नारद का संवाद — समाप्त होता है, इस महान् पुराण के प्रथम स्कन्ध में, जिसे सिद्ध पुरुष परमहंस-संहिता कहते हैं। इस अध्याय में, श्रीमद्भागवतम् स्कन्ध 1 अध्याय 5 में, देवर्षि नारद व्यास जी के महान् ग्रन्थ में शेष रह गई एक बात को पा लेते हैं — भगवान् की महिमा का पूर्ण गान — और दिखाते हैं कि भक्ति ही समस्त ज्ञान को पूर्ण और समस्त कर्म को उद्धार-रूप बनाती है। फिर, सबसे मार्मिक रूप में, वे अपना ही जीवन प्रमाण-रूप में प्रस्तुत करते हैं, यह स्मरण करते हुए कि किस प्रकार एक दासीपुत्र केवल सन्तों के संग और श्रीकृष्ण की कथाओं के श्रवण से भगवान् के चरणों तक पहुँच गया। उनका अन्तिम आग्रह — सर्वशक्तिमान् भगवान् की महिमाओं का वर्णन करो — वह बीज है जिससे सम्पूर्ण भागवत उगेगा। हम नारद जी के इस उपदेश को अपने हृदय में धारण करें: उसी एक लक्ष्य को खोजें जो लोक नहीं दे सकते, अपना प्रत्येक कर्म भगवान् को समर्पित करें, और उनकी महिमा को बार-बार सुनें जब तक प्रेम न जाग उठे।

श्रीमद्भागवतम् का दिव्य ज्ञान हमारे हृदय में शुद्ध भक्ति को जागृत करे।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

जय श्री माधव।

सन्दर्भ एवं आभार

मूल संस्करण: गीता प्रेस, श्रीमद्भागवत महापुराण (हिन्दी/अंग्रेज़ी), प्रथम स्कन्ध, पञ्चम अध्याय, पृष्ठ 15–18।

श्रीमद्भागवतम् विज्ञडम् · बिस्वा सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट। पण्डित डॉ. श्री काशीनाथ मिश्र जी के आध्यात्मिक मार्गदर्शन एवं अनुशंसा के अनुसार प्रस्तुत।

॥ हरि ॐ तत्सत् ॥

जय श्री माधव

ऑनलाइन पढ़ें: kalkiabatara.org/hi/blog-srimad-bhagavatam-canto-1-chapter-5-narada-instructs-vyasa-hi.html

श्रीमद्भागवतम् विज्ञडम् · कल्कि अवतार इंटरनेशनल · बिस्व सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट

